International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 270-272

वैश्वीकरण और मानवाधिकार संरक्षण

डॉ0 रानू शर्मा

विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, के0ए0 (पी0जी0) कॉलेज, कासगंज, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश

वैश्वीकरण के इस युग में विश्व के सम्पूर्ण राष्ट्र जनसंचार सूचना प्रौद्यौगिकी और आर्थिक लेन–देन की उदारीपूर्ण प्रक्रिया से लाभान्वित हो रहे हैं। समृद्धि और विकास की मीठी परिकल्पना ने एक दूसरे की जरूरतों का अनुभव ही नहीं कराया बल्कि निर्भर भी बना दिया है। ज्ञान की साझा प्रक्रिया भी आरम्भ हुई है फलस्वरूप तकनीकी जानकारी से लेकर प्रबन्धन, पर्यावरण, पोषण और प्रगति का दौर चल पड़ा है। वैश्वीकरण का उदय 1870 से 1914 के मध्य भी हुआ था। इस काल में मानव समाज के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए भी तत्समय में कुछ राष्ट्रों ने एक दूसरे के पास आना शुरू किया था। तब वैश्वीकरण के मुद्दे अलग थे आज जिस प्रकार अर्थ और सूचना प्रौद्योगिकी वैश्वीकरण का आधार बनीं हुई हैं, उसी प्रकार उस काल की अनिवार्यतायों भी भिन्न प्रकार की थी। मानव के जीवन स्तर से लेकर उसके मूल अधिकारों, सुरक्षा और संरक्षा आदि आधार तत्कालीन अनिवार्यताओं के साथ जुड़े थे, जिसकी प्रतिपूर्ति 10 दिसम्बर 1948 संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में 'मानवाधिकार संरक्षण' को लेकर हुई। वैश्वीकरण के विशद चिन्तन की यह महत्वपूर्ण घटना थी। मानवों पर हो रहे वर्वर अत्याचारों से मुक्त कराने का एक संयुक्त उद्घोष था, जिसमें मानव को प्रकृति प्रदत्त नैसर्गिक अधिकारों को उसे दिलाने का दृढ़ निश्चय व्यक्त किया गया था। 30 अनुच्छेदों के इस आधार संहिता पर विश्व की सकारात्मक सहमति बनी, और मानव को जीने के नैसर्गिक अधिकार, समानता, स्वतन्त्रता, श्रम व्यवस्था, अभिव्यक्ति आदि के लिए सम्पूर्ण विश्व में चर्चा चल पड़ी। गैर सरकारी संगठनों का भी उदय हुआ और 'एमनेस्टी इंटरनेशनल', 'ह्यूमन राइट्स', 'रोड क्रास' ने मानवाधिकारों के लिए विश्वस्तर पर कार्य शुरू किया, भारत में भी 1993 में मानवाधिकार आयोग का गठन हुआ। लेकिन मानव के नैसर्गिक अधिकारों का प्रभावी संरक्षण नहीं हो पाया। विगत तीस वर्षों से वैश्वीकरण की उपस्थिति का जो परिदृश्य बना है, उसमें शक्तिशाली राष्ट्र दोहरा मानदण्ड अपना रहे है, और निजी स्वार्थों के लिए मानवाधिकारों का खुला उल्लंघन भी कर रहे हैं। वे अपने ही देश में नहीं, बल्कि अन्य अल्पविकसित या विकासशील देशों में भी अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सामूहित हत्याऐं, शोषण और अमानवीय कृतय कर रहे हैं। बहुत से देश आज भी श्रमशोषण, दास प्रथा, और अमानवीयता से अपने नागरिकों को मुक्त नहीं करा पाये हैं, वे मानवाधिकार आयोग को भी अपने विरूद्ध समझकर उस पर अंकुश लगाने का कार्य करते हैं, आपको नहीं लगता कि वैश्वीकरण की वर्तमान प्रक्रिया 'कुछ राष्ट्रों' और कुछ लोगों के लिए है। विश्व का बहुत बड़ा मानव समाज आज भी शोषित और पीड़ित होकर अपने मौलिक अधिकारों को भी नहीं प्राप्त कर पा रहा है। आर्थिक उदारीकरण, खुले बाजारवाद और सूचना प्रौद्यौगिकी का विस्तार आखिर विकसित देशों को ही लाभ पहुचा रहा है, उन्हों ने अल्पविकसित और विकाशील देशों को अपना बाजार बनाकर उपभोक्तावाद की संस्कृति का फैलाव किया है, फलस्वरूप इन राष्ट्रों की बहुत बड़ी पूंजी पर भी इनका अधिकार हो गया है। मानव जाने–अनजाने और अधिक जरूरतों की चाह में शोषित हो रहा है। वैश्वीकरण का लाभ सम्पूर्ण मानव समाज को समान रूप से मिलना चाहिये। उसे वैश्विक स्तर की समानता, शिक्षा, स्वतन्त्रता और जीवन स्तर की गारंटी मिलनी चाहिएं धर्म–भेद, जाति–भेद, और देश–भेद के अन्तर को समाप्त किए बिना वैश्वीकरण की सफलता संदिग्ध प्रतीत होती है। विकसित राष्ट्र जब तक पक्षपात पूर्ण हितों को छोड़कर 'मानव' और केवल 'मानव' के हितों को ध्यान में रखकर पूंजी, उद्योग प्रबन्धन और सूचना प्रौद्यौगिकी की प्रयोग नहीं करेंगे, तब तक वैश्वीकरण की प्रक्रिया बेमानी के अतिरिक्त और कुछ नहीं होगी।''

मूल शब्द: वैश्वीकरण, मानवाधिकार।

प्रस्तावना

वैश्वीकरण का दौर गतिमान है। सम्पूर्ण विश्व के राष्ट्र स्वयं सीमाओं को खोलकर खड़े हैं। वे अपने राष्ट्र के लिए आर्थिक संसाधनों का ऐसा आधार खड़ा करना चाहते हैं, जिससे उनका देश बुनियादी जरूरतों को ही पूरा नहीं करे, बल्कि सुख समृद्धि और विकास की ओर भी अग्रसर हो सके। वे जनसंचार और सूचना प्रोद्यौगिकी से अपने देश को पूरित करना चाहते हैं, ताकि सम्पूर्ण विश्व की तकनीकी जानकारी से लेकर प्रबन्धन, पर्यावरण,

पोषण, और प्रगति को अपने देश में स्थापित कर सकें। यह तो मानना ही होगा कि 2वैश्वीकरण की परम्परा ने सम्पूर्ण विश्व को एक दूसरे के समीप ला खड़ा किया है। सभी राष्ट्र मिल जुलकर अपने ज्ञान को साझा बना रहे हैं और अपने देश के नागरिकों के जीवनस्तर को ऊँचा उठाने में प्रयत्नशील हैं। वैश्वीकरण की प्रक्रिया के मूल में मानव की कौतूहल और जिज्ञासा के साथ अनुकरण की प्रवृत्ति छिपी रहती है। वह सीखना और जनना ही नहीं चाहता, बल्कि सुख और आनन्द भी चाहता है, तथा इसके लिए वह साधनों की खोज और उनकी प्रतिपूर्ति में लगा रहता है। वैश्वीकरण की प्रतिफलित भावना भी उसी मूल प्रवृत्ति की देन है। वैश्वीकरण का यह दौर प्रभावी रूप से 1870 से 1914 के मध्य भी रहा था, इस काल में मानव समाज के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के क्रम में विश्वभर के राष्ट्र समीप आना शुरू हुए थे, यह बात अलग थी कि तब वैश्वीकरण के मुद्दे अलग थे, आज जिस प्रकार अर्थ और सूचना प्रौद्यौगिकी वैश्वीकरण का आधार बनी हुई है, उसी प्रकार उस काल की अनिवार्यताऐं भी अलग प्रकार की थीं, तथा विश्व के राष्ट्रों के साझा मंचों पर जिन विषयों को समझा और जाना जा रहा था, वे भी मानव समाज को उच्चावस्था में ले जाने वाले थे। वैश्वीकरण के उसी दौर में मानव की सुरक्षा और संरक्षा को लेकर चिन्ता व्यक्त की जाने

लगी थी, जिसकी प्रतिपूर्ति 10 दिसम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में 'मानवाधिकार संरक्षण' को लेकर हुई। वैश्वीकरण के विशद चिन्तन की यह महत्वपूर्ण घटना थी, जिसमें सम्पूर्ण विश्व के अन्दर मानवों पर हो रहे अत्याचारों, शोषणों और अमानवीयतापूर्ण बर्वर कृत्यों की घोर निन्दा ही नहीं गई बल्कि मानव समाज को उसके मूल नैसर्गिक न्याय की जरूरत पर वैश्विक दृष्टि से सहमति बनी और इसके लिए एक आचार संहिता का निर्माण किया गया। ''मानवाधिकारों की इस आचार संहिता में 30 अनुच्छेदों का प्राविधान किया गया और एक व्याप्क प्रस्तावना भी प्रस्तुत की गई।'' प्रस्तावना में यह धारणा व्यक्त की गई की संसार में स्वतन्त्रता, न्याय और शांति की स्थापना होनी चाहिये, जीवन जीने का अधिकार नेसर्गिक अधिकार है, जिसे मानव जन्म के साथ प्राप्त करता है, इस अधिकार का हनन कोई संविधान, सत्ता या शक्ति नहीं कर सकती यदि ऐसा वह करती है तो राह मानव के मूल नैसर्गिक अधिकारों पर अतिक्रमण है जिसे सम्पूर्ण विश्व में लाना चाहिये। मानवाधिकारों की यह उदार भावना
वैश्विक चिन्तन को प्रकट करती है। इस आचार संहिता के अनुच्छेद 1 और 2 में मानव की स्वतन्त्रता, समानता, गरिमा, और आपसी सम्बन्धों को वैचारिक धरातल पर खड़ा करने का प्रयास किया गया है। साथ ही मानव और मानव के बीच किसी भी प्रकार के वर्ण, लिंग, जाति, धर्म, भाषा, जन्म, रंग, विचारधारा आदि अन्य स्थितियों के आधार पर भेदभाव का पूर्ण निषेध किया गया है। इसी संहिता के अनुच्छेद क्रमांक 3, 4, 5 में मानव को 'दास' बनाने, उसके साथ क्रूर व्यवहार करने, अपमान या अमानवीयता का व्यवहार करने पर प्रतिबन्ध किया गया है। अनुच्छेद 6 से 11 के बीच कानूनी प्राविधानों की व्यवस्था है, जिससे सभी मानवों के लिए समान कानूनी संरक्षण प्रदान किए गये हैं। अनुच्छेद 18–20 में मानव को उसकी अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के साथ धर्म की स्वतन्त्रता, आदि का अधिकार प्रदान किये गये हैं। इसी तरह 22–27 अनुच्छेदों में सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक मौलिकताओं और अधिकारों की चर्चा करते हुए जीवनयापन के अधिकारों, काम, श्रम, विश्राम, सुरक्षा, शिक्षा की भागीदारी का व्यापक आधार तय किया गया है।[2] उपर्युक्त सभी प्रावधान मानवाधिकारों के वैश्विक चिन्तन को स्पष्ट करते हैं, जिसके मूल में मानव के नैसर्गिक अधिकारों के संरक्षण और सामाजिक समानता, शिक्षा के साथ जीवनोद्देश्यों की पूर्ति की अनिवार्यता लक्ष्य हैं। उसे उस राष्ट्र का समान नागरिक अधिकार ही प्राप्त नहीं होना चाहिए, बल्कि समान राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक अधिकार मिलने चाहिये। 'कुटुम्ब को समाज की नैसर्गिक और प्राथमिक इकाई मानकर मानव के हितों के संरक्षण की वास्तव में वैश्वीकरण की भावना का ही प्रतिफल है। इस भावना को महिला संरक्षण और शिशु अधिकारों के साथ जोड़कर इसे विस्तार दिया गया।
सम्पूर्ण विश्व ने 'मानवाधिकार संरक्षण' को लेकर अपनी सकारात्मक स्वीकृति प्रदान की। फलस्वरूप सभी राष्ट्रों ने अपने–अपने यहां मानवाधिकारों को लेकर चिन्ता ही व्यक्त नहीं की, बल्कि उनके संरक्षण को लेकर कानूनी व्यवस्था भी बनाई। इस पहल में तमाम गैर सरकारी संगठनों का भी उदय हुआ, जिन्होंने विश्व मंच पर मनावाधिकारों के संरक्षण पर किए गये उल्लेखनीय कार्यों के फलस्वरूप अपनी पहचान बनाई। सन् 1977 में नोबेल पुरस्कार पाने वाला 'एमनेस्टी इंटरनेशनल' एक विश्वव्यापी संगठन है। 150 से
अधिक देशों में अपनी प्रभावी उपस्थिति दर्ज कराने वाले इस संगठन का महत्व इस बात से ही प्रतिपादित होता है कि इसे संयुक्त राष्ट्र संघ में सलाहकार के रूप में स्थान प्राप्त है। सन् 1978 में न्यूयार्क में स्थापित 'ह्यूमनराइट्स' नामक संगठन भी एक अन्तरराष्ट्रीय मनवाधिकार को संरक्षण देने वाला संगठन है। इसी तरह 1979 में स्थापित जिनेवा का ''डिफेंस फॉर चिल्ड्रेन इंटरनेशनल' और 'रेडक्रास' आदि ऐसे संगठन हैं, जो विश्वभर में मानवाधिकारों के लिए जाने जाते हैं। जो आज भी वैश्वीकरण की बलवती इच्छाशक्ति की प्रक्रिया की परिणाम स्वरूप ही अपना कार्य सुगमता से सम्पन्न कर पा रहे हैं। मानवाधिकारों के संरक्षण को लेकर भारत सदैव से ही सजग रहा है, उसने अपने संविधान की प्रस्तावना में ही इस उद्देश्य की प्रतिपूर्ति की है, फिर भी इस दिशा में ठोस उपाय करने की दृष्टि से सितम्बर 1993 को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गई और 1994 में मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए देश के सभी राज्यों और जिलों स्तर तक मानवाधिकार न्यायालयों की स्थापना का प्रावधान किया गया, लेकिन सम्पूर्ण विश्व की तरह यहाँ भी 'मानव–समाज' के हितों को संरक्षित नहीं किया जा सका। क्योंकि ''जितने अधिक मानवाधिकारों के उल्लंघन हो रहे हैं उतना अधिक ही मानवाधिकारों की रक्षा का कार्य करने वाले आयोगों अथवा संस्थानों के प्रति उपेक्षापूर्ण रवैया अपनाया जा रहा है। दुनिया के अधिकतर देशों की सरकारें ऐसे आयोगों को झूठा अथवा निरर्थक करने में जुटी रहती हैं। वास्तव में मानवाधिकार आयोग ऐसी सरकारों का अमानवीय चेहरा पूरे विश्व को दिखाकर उसको न केवल बेनकाब करता है, बल्कि उन पर अंकुश लगाने का भी काम करता है। यह बात प्रत्येक सरकार को आपत्तिजनक लगती है। सरकारें ही क्यों यदिउग्रवादी संगठनों की कारगुजारियों के सम्बन्ध के कुछ सच्चे तथ्य जनता के सामने लाये जाते हैं तो वे तत्व अधिक उग्र एवं अत्याचारी होने लगते हैं ऐसी सरकारें इन आयोगों को किसी न किसी प्रकार से बन्द करने के प्रयास में लगी रहती हैं और उनके विरोध में झूठा प्रचार करने लगती हैं।''[3] मजे की बात यह है कि इस प्रकार के मानव समाज विरोधी कार्यों में वैश्विकता का दंभ करने वाले देश भी हैं। जहां चीन सामूहिक नर संहार कराता है, तिब्बत के मानव–समाज को उसका नैसर्गिक अधिकार नहीं देता, वहीं अमेरिका अफगानिस्तान, पकिस्तान, ईरान जैसे देशों के अन्दर घुसकर उनके आर्थिक
अधिकारों से लेकर सामाजिक अधिकारों तक में हस्तक्षेप ही नहीं करता, बल्कि वहां के मावन समाज का उत्पीड़न भी करता है। ब्रिटेन हो, आस्ट्रेलिया या कोई अन्य राष्ट्र सभी 'मावन' का शोषण करने पर तुले हैं। वे मानव समाज को पीड़ा पहुचा रहे हैं, अपने हितों के लिए उनकी मजबूरी का फायदा उठाकर कहीं उसे 'दास' बन रहे हैं, अनुबन्धित श्रमिक बना रहे हैं उसे धार्मिक उन्माद में डुबोकर आतंकवादी बना रहे हैं। कुछ राष्ट्र तो महिलाओं और बच्चों तक का शोषण अपने हितों के लिए कर रहे हैं, इन राष्ट्रों को अपने गिरेवान में झांककर देखना चाहिये–ये सभी अपने–अपने स्वार्थ देख रहे हैं। भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया खुले बाजारवाद, पूंजी के तरल प्रवाह और उदार लेन–देन के साथ–साथ सूचना और सम्पक प्रौद्यौगिकी के तेजी से फैलते मकड़जाल के मध्य उलझकर रह गई है। निश्चय विचारणीय विषय यह है कि सारा का सारा विकास और प्रगति आखिर किसके लिए की जा रही है? कुछ देशों के लिए या कुछ मानवों के लिए? बड़े और विकसित देशों की दोहरी दबाव की नीति अपने हितों की वरीयता और छोटे विकासशील देशों का शोषण तथा उन देशों को खुला बाजार बनाकर वहां उपभोक्तावाद की प्रवृति का विस्तार आदि क्या यह प्रदर्शित नहीं कर रहा कि वैश्वीकरण के उद्देश्य भी

निजी हितों और लाभार्जन की सीमाओं में कैद है और सम्पूर्ण मानव समाज के हितों को अनदेखा किया जा रहा है? वैश्विक स्तर पर भी मावन को रंगभेद, जाति–भेद, धर्म–भेद, देश–भेद आदि आधारों पर बाँटकर देखा जाता है, तथा वैश्वीकरण का नेतृत्व करने वाले देश जप इन आधारों पर अपनी की उदारीकरण सहित उपर्युक्त सभी आवश्यकताऐं विकास का आधार स्तभ परंतु यहाँ नीति–निर्णय तय करते हैं, तब वैश्वीकरण का लाभ मानव–समाज को मिलेगा या नहीं–संदेश उठ खड़ा होता है। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने 1949 में कनाड़ा की संसद में ठीक ही कहा था कि अगर दुनियाँ के विभिन्न भागों में बहुत बड़ी संख्या में लोग गरीबी और कंगाली में रहेंगे, तो न सुरक्षा संभव है और न ही असली शांति। और न ही पूरी दुनिया के लिए संतुलित अर्थव्यवस्था बन पायेगी। अगर अविकसित देश सन्तुलन बिगाड़ते रहे और अधिक धनी देशों पर दबाव डालते रहे, तो अर्थ व्यवस्था सन्तुलित नहीं रह सकेगी।''[4] डॉ0 मनमोहन सिंह भी इस सम्बन्ध में कुछ इसी प्रकार की अभिव्यक्ति देते हैं कि–गरीब देशों में जनता को भूमण्डलीय के लाभों से आवश्स्त करने के लिए हमें श्रम बहुल उद्योगों और सेवाओं के व्यापार को उदार बनाने के लिए दूरदृष्टि पूर्ण रवैया अपनाना होगा। मैं व्यापार को खुशहाली का ही नहीं बल्कि शांति निर्माण का भी साधन मानता हूँ।''[5] भूमण्डलीकरण का उद्देश्य सम्पूर्ण मानव समाज की समानता, एकता, एकात्मता और स्वतन्त्रता के लिए होना चाहिये। मानव के श्रम, शिक्षा, अर्थ और जीने के अधिकार की गारंटी ही वैश्वीकरण की उपयोगिता सिद्ध कर पायेगी। सभी देशों का मानव समाज जब वैश्विक स्तर पर नैसर्गिक अधिकारों के साथ स्वतन्त्र, स्वावलम्बी और साधन सम्पन्न होकर, धर्म, जाति, वर्ण, लिंग या देश–भेद की हीन भावना से दूर हो जायेगा और सम्पन्न राष्ट्र स हेतु और केवल 'मानव' और उसके नैसर्गिक अधिकारों के संरक्षण के लिए निष्पक्षतापूर्वक कटिबद्ध होंगे, तब ही वैश्वीकरण की सफलता संभव हो सकेगी।

सन्दर्भ

1. प्रांजल धर – मानवाधिकार और वर्तमान समय–कुरूक्षेत्र–दिसम्बर 2006, पृ0 5।
2. प्रांजल धर – मानवाधिकार और वर्तमान समय–कुरूक्षेत्र–दिसम्बर 2006, पृ0 5।
3. मनोहर पुरी – मानवाधिकारों की रक्षा, कुरूक्षेत्र, दिसम्बर 2006, पृ0 17।
4. डॉ0 मनमोहन सिंह – सम्पूर्ण भूमण्डलीकरण की ओर – योजना–दिसम्बर 2006, पृ0 6।
5. डॉ0 मनमोहन सिंह – सम्पूर्ण भूमण्डलीकरण की ओर – योजना–दिसम्बर 2006, पृ0 6।